fnukd 8 fnlEcj] 2011 dk lEi.kkuUn lLdr fo'ofo|ky;] okjk.klh }kjk vk;kftr 29o nh{kkUr lekjkg gr egkefge Jh jkT;iky dk lEck/ku

मुख्य अतिथि पद्मभूषण प्रो0 सत्यव्रत शास्त्री जी, कुलपति प्रो0 बिन्दा प्रसाद मिश्र, कार्यपरिषद् एवं विद्वत्परिषद् के सदस्यगण, शिक्षकगण, छात्रों एवं छात्राओं, सम्मानित अतिथिगण एवं पत्रकार–बन्धुओं,

इस काशी–नगरी के हृदयदेश में स्थित सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के 29 वें दीक्षान्त–महोत्सव में भाग लेते हुये मुझे अपार हर्ष की अनुभूति हो रही है।

यह काशी–पुरी समस्त विश्व में अपनी सांस्कृतिक, धार्मिक, तथा विविध विधाओं की परम्पराओं के वैशिष्ट्य से आज भी जानी

जाती है। निश्चय ही आप स्नातकगण धन्य हैं, जिन्होंने ऐसी काशी में अवस्थित सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय की स्नातकता प्राप्त की है और ऐसे सभी पदक प्राप्त करने वाले छात्रों, उनके अभिभावकों तथा उन्हें शिक्षित–दीक्षित करने वाले गुरुजनों को अपनी हार्दिक बधाई देता हूँ।

विशेषतः आपके परम्परागत इस उच्च शिक्षा संस्थान का प्रारम्भ हुए 222 साल हो गए हैं। जैसा कि मैं समझता हूँ, सम्भवतः संस्थागत रूप में संस्कृत अध्ययन की परम्परा की शुरुआत ही आपकी संस्था से ही हुई होगी। 222 साल तक निरन्तरता में रहना और एक पाठशाला के रूप में आरम्भ होकर बीच में महाविद्यालय का स्वरूप धारण करके विश्वविद्यालय स्वरूप में सर्वोच्च शिक्षा संस्था के रूप में अभिवृद्ध होना एक असाधारण कार्य है, जिसके पीछे ऐसे महानुभावों का गम्भीर दर्शन, कठोर साधना

एवं निरुपम लगाव ही कारण हो सकते हैं। संस्था के इतने लम्बे इतिहास की शुरुआत से आज तक जिन प्राचार्यों, जिन विद्वानों, जिन अधिकारियों एवं छात्रों का उल्लेखनीय योगदान है, मैं उन सबका अभिनन्दन करता हूँ और उनके प्रति श्रद्धा व्यक्त करता हूँ।

मैं इस सौभाग्यशाली मंगलमय सुअवसर पर देववाणी संस्कृत के प्रति संबर्द्धन एवं सम्पोषण की दृष्टि रखने वाले उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री, डॉ0 सम्पूर्णानन्द एवं सनातन परम्परा के संरक्षक पं0 कमलापति त्रिपाठी को श्रद्धासुमन अर्पित करता हूँ, जिन्होंने इसे विश्वविद्यालय का स्वरूप प्रदान करते हुए इसकी स्थापना की। साथ ही पूर्व काशीराज को भी स्मरण करता हूँ, जिनके प्रयास से इस संस्था की स्थापना में सम्बल प्राप्त हुआ।

वस्तुतः दीक्षान्त का परम्परागत अध्ययन, विशेषतः संस्कृत विद्या की अध्ययन परम्परा में व्यापक महत्त्व है। संस्कृत विद्या की

परम्परा में इसे औपचारिक उपक्रम के रूप में आयोजित नहीं किया जाता है, अपितु यह एक संस्कार है और समावर्त्तन संस्कार के रूप में हमारे जीवन का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। पश्चिम में दीक्षान्त को अकादमिक शिक्षा के समापन के वैधानिक आयोजन के रूप में मनाया जाता है। दीक्षान्त के बाद स्नातक विधिसम्मत रूप में अपनी उपाधि के प्रयोग के लिये अधिकृत हो जाता है। भारत में ज्ञान का उपयोग जन–जन के लिये हो, तभी उसे सार्थक माना जाता है। स्वयं वेद कहते हैं – 'सुविज्ञानं चिकितुषे जनाय' (ऋग्वेद 7/104/12)। इसलिये यह अवसर मात्र स्नातक को उसके अध्ययन के परिणाम के रूप में उपाधि देने का ही है, ऐसा नहीं समझना चाहिए। यह भी एक प्रयोजन है, किन्तु अन्तिम नहीं है।

संस्कृत भारत की आत्मा है। जैसे कि आत्मिक विकास के बिना मात्र शारीरिक विकास से आदमी पूर्ण नहीं होता, वैसे ही

संस्कृत अध्ययन–अध्यापन भी अपनी जगह पर समाज की नितान्त आवश्यकता है। संस्कृत साहित्य में राष्ट्र भावना की स्थिति भी अत्यन्त समुन्नत है। देश–प्रेम, देश विकास तथा राष्ट्रोदय की भावना संस्कृत साहित्य में पहले से भी प्रौढ़–रूप में विद्यमान है। संस्कृत साहित्य में जीवन के प्रति जैसा उल्लास आशावादिता तथा आध्यात्मिक अनुराग दिखता है, वह संस्कृत भाषा की निजी सम्पत्ति है। परिणाम स्वरूप संस्कृत साहित्य में राष्ट्र भावना एवं एक राष्ट्र की भावना का विचार मिलता है। धार्मिक अनुष्ठानों के अवसर पर भी राष्ट्र भावना की अभिव्यक्ति मिलती है। किसी भी अनुष्ठान का प्रारम्भ संकल्पपूर्वक ही होता है। संकल्प के समय उपासक अखण्ड भारत का चित्रण करता है। भारतीय संस्कृति की आदिकाल से ही यह विशेषता रही है कि वह उद्देश्यपूर्ण,

आदर्शयुक्त, पारमार्थिक जीवन को यापन करने की शक्ति प्रदान करती है।

भारत को पुनः विश्वगुरु के अपने पुराने गौरव को लौटाने की क्षमता संस्कृत विद्या में है, क्योंकि यह स्वभावतः विश्वतोमुखी है। संस्कृत को जानने वाले प्रत्येक व्यक्ति का संकल्प है–

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।।

प्यारे स्नातकों,

आज शिक्षा, भौतिक प्रगति, मानवी सूझ–बूझ सभी उत्कर्ष पर हैं, तथापि इनसे समृद्ध व्यक्ति को सुसंस्कृत कहना समीचीन नहीं है। संस्कारवान तो वह तभी बन सकता है जब वह अपने अन्तःकरण की मलिनता को धोकर गुण, कर्म, स्वभाव को समुन्नत

करता है। यह तभी सम्भव है जब संस्कृत भाषा में निहित मानवोत्थापक मूल्यों को आत्मनिष्ठ किया जाये।

आयुष्मान् स्नातकों,

पढ़ाई का उद्देश्य मात्र तत्–तद् विषयों में कुछ गिने चुने ग्रंथों को पढ़कर उपाधि प्राप्त करना नहीं है, अपितु मानव को प्रगतिशील बनाने वाले मूल्यों के प्रति समर्पित होना भी है। तद्–तद् विषयों में वैदुष्य प्राप्त करने से हम तद्नुसार कोई नौकरी प्राप्त कर सकेंगे, किन्तु उतने से आदमी के व्यक्तित्व में अपेक्षित परिणाम नहीं आता है। अपेक्षित परिणाम तो देश और समाज के हित में किये गये सार्थक कार्यों से है। शिक्षित व्यक्ति से समाज अपेक्षा करता है कि वह सत्य–असत्य, कृत्य–अकृत्य, वक्तव्य–अवक्तव्य को विवेक से समाज के सामने प्रस्तुत करे,

जिससे समाज में सर्वत्र व्याप्त कुरीतियों और भ्रष्टाचार पर अंकुश लग सके।

सर्व–धर्म–समभाव के प्रतीक रूप में अद्भुत वास्तुकला से निर्मित 160 साल का पुरातन आपका मुख्य भवन आपकी प्रतिष्ठा के प्रतीक के रूप में विराजमान है, जिसको देखकर मैंने बहुत आनन्द का अनुभव किया। आपका सरस्वती भवन, नाम के अनुरूप वास्तव में सरस्वती का ही भवन है। अद्भुत पाण्डुलिपियों के साथ–साथ अत्यन्त प्राचीन मुद्रित पुस्तकों का विद्यमान जो संग्रह है, उसको उत्तर प्रदेश शासन, केन्द्रीय सरकार और यूनेस्को जैसी संस्थाओं से अपेक्षित प्रतिष्ठा और आर्थिक सहायता प्राप्त हो, यह उचित प्रतीत होता है।

उद्भट पौरस्त्य विद्वान सर गंगानाथ झा, पं0 गोपीनाथ कविराज जैसे महामनीषियों की मूर्तियों के साथ–साथ प्रतिष्ठित

पाश्चात्त्य विद्वानों डॉ0 ग्रिफिथ, डॉ0 वेनिस की भी मूर्तियों को प्रतिष्ठित करके इस विश्वविद्यालय ने शैक्षिक मर्यादाओं का अद्‌भुत निदर्शन स्थापित किया है। संस्कृत, पालि एवं प्राकृत के संरक्षण तथा प्राच्य भारतीय विद्याओं के सम्बर्द्धन के लिए स्थापित इस विश्वविद्यालय ने विज्ञान–गृहविज्ञान आदि आधुनिक विद्याओं, शिक्षाशास्त्र, ग्रन्थालय विज्ञान जैसे अनेक व्यावसायिक शिक्षा पाठ्‌यक्रमों के अध्ययन की व्यवस्था के साथ–साथ 10 विदेशी भाषाओं के अध्ययन की व्यवस्था करके प्राच्य एवं पाश्चात्त्य के समन्वय का सराहनीय प्रयास किया है।

भारत की प्राचीनतम दोनों विद्या परम्पराओं–वैदिक विद्या परम्परा एवं श्रमण विद्या परम्परा में अध्ययन–अध्यापन एवं शोध कराने वाला सबसे प्राचीनतम सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय का यह पुनीत एवं नैतिक दायित्व है कि इस परम्परा को अक्षुण्ण बनाये

रखते हुए इसका संवर्धन करे। वास्तव में आप सभी स्नातक सौभाग्यशाली हैं कि काशी में स्थित सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय से शास्त्रों का परम्परागत अध्ययन–अध्यापन एवं शोध का कार्य कर रहे हैं।

सौभाग्य से आप इस सिद्धिपीठिका काशिका का आश्रय पाये हुए हैं, नित्य स्वाध्यायी हैं और 'युवा' हैं। अतः विश्व की कोई भी विद्या आपसे दूर नहीं है। पृथ्वी पर आप अपनी विद्या एवं कर्मों के बल पर सर्वोत्तम 'मधु' (जीवन का पवित्र लक्ष्य) प्राप्त कर सकते हैं क्योंकि आपके शरीर में भी तेजोमय, अमृतमय ईश्वर अधिष्ठित है।

महायोगेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण ने भी श्रीमद्भगवतगीता के पन्द्रहवें अध्याय में उक्त तथ्य की उद्घोषणा की है –

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन! तिष्ठति।
भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया।।

अतः इस परम–पावन महोत्सव के अवसर पर मैं आपका इस 21वीं शताब्दी पर आह्वान करता हूँ कि आपके हृदयदेश में विराजमान 'प्रभु' निरन्तर आपके कठिनतम मार्गों को सुगम बनावें और इस कण्टकाकीर्ण पृथिवी के कण्टकाकीर्ण प्रश्नों का आप अपनी मेधा, प्रज्ञा और अपनी जिजीविषा से उत्तर देते हुए अपने जीवन को आलोकमय बनावें और अपनी विद्याओं से समाज को आलोकित करें।

इस सौभाग्यपूर्ण दीक्षान्त–महोत्सव में आपको विभिन्न उपाधियाँ प्रदान करते हुए मैं स्वयं अभिभूत हूँ और बाबा विश्वनाथ एवं माँ अन्नपूर्णा से कामना करता हूँ कि 'शिवास्ते पन्थानः सन्तु'। इस अवसर पर समस्त पदक–विजेताओं एवं उन छात्रों को जिन्हें आज उपाधि प्रदान की जा रही है, मै एक बार फिर से बधाई और

अपना आशीर्वाद देते हुए उनके मंगलमय भविष्य की कामना करता हूँ।

।। जयतु संस्कृतम् । जयतु भारतम्।।

/kU;okn&ueLdkjA